ISSN No. 2394-9996

New Vision

Multi-disciplinary Research Journal

January 2017

Online version : http://www.milliyaresearchportal.com

Anjuman Ishat -e- Taleem Beed's
Milliya Arts, Science & Management Science College,
Beed- 431122 (Maharashtra)
Website : www.milliyasrcollege.org
E-mail.ID : newvisionjournal@gmail.com

INDEX

Sr. No.	Title of Research Paper	Author	Sub	P.No.
1	AMIT CHAUDHURI: A NEW WAY OF WRITING	Dr. Laxmikant Bahegavankar	English	1
2	DEPICTION OF CULTURE AND HISTORY IN AMITAV GHOSH'S *THE SHADOW LINES*	Dr. Mrs. Shaikh Ajaz Perveen Mohd. Khaleeludddin	English	4
3	Realism and Humiliation in Dalit Literature	Dr.Sangeeta S.Sasane	English	10
4	Mahatma Gandhi's View of Rural Development	Dr. Sandhya Beedkar	Sociology	13
5	Dr. Ambedkar's Social Reformer Movement	Syed Tanvir Badruddin	Sociology	16
6	"A Review on the life of Maulana Abulkalam Azad."	Dr. Mohammed Quayyum M. Younus	Polytical Science	19
7	VITAL DEMOCRACY UNDER THE PARTICIPATION OF INDIAN NATINALISM.	Asst. Prof. Shaikh Gafoor Ahmed	Polytical Science	26
8	SPORTS NUTRITION	Dr. Shaikh Afsar Jaidi Saif Sultan	Phy - Education	30
9	Climate Change and its Impact on Agriculture	Dr. Mirza Wajid Baig Rustum Baig	Geography	35
10	Phychology of Sport and Exercise	Dr. Saudagar Faruk Dr. Md. Ataullah Jagirdar	Phy - Education	40
11	कलावाद एक समिक्षा	डॉ. मिर्झा असद बेग डॉ. पठाण अय्युब खान	हिंदी	44
12	जनवादी कवि नागार्जुन	प्रा. डॉ. महेमूद पटेल	हिंदी	47
13	नारी अस्मिता का सवाल : 'त्यागपत्र'	डॉ. अलका श्री. डांगे	हिंदी	50

ISSN No.2394-9996

कलावाद एक समिक्षा

* डॉ. मिर्झा असद बेग,
हिन्दी विभाग प्रमुख,
मिल्लीया कला, विज्ञान व व्यवस्थापनशास्त्र
महाविद्यालय, बीड.

डॉ. पठाण अय्युब मजीद खान
हिन्दी विभाग,
मिल्लीया कला, विज्ञान व व्यवस्थापनशास्त्र
महाविद्यालय, बीड.

कला कलाकार की व्यक्तिगत की सम्यक् की अभिव्यक्ति है। सृजन के अनुभूतिमय क्षणों में कलाकार भी उसी अनुभूतियोग को प्राप्त होता है जिस अनुभूति योग का आनन्द उपभोक्ता रसानुभूतियोग को प्राप्त होता है जिस अनुभूति योग का आनन्द उपभोक्ता रसानुभूति के क्षणों में पाता है। ये क्षण कलाकार को उसी प्रकार व्यक्तिगत बन्धनों से ऊपर उठाकर लोकसामान्य भूमि पर ले जाते हैं, जिस प्रकार रसानुभूति के समय पाठक, श्रोता, दर्शक या कला का द्रष्टा लोकसामान्य भावभूमि को प्राप्त होता है। इस दृष्टि से कला नितान्त वैयक्तिक सृष्टि है, तब भी कलाकार के सभी बन्धनों से मुक्त होने पर, उसका लोक-प्राणित्व समाप्त नहीं हो जाता। इस सम्बन्ध में बाबू गुलाबराय का यह कथन महत्त्वपूर्ण है, ``साहित्य इसी लोक की किन्तु असाधारण वस्तु है और उसके मूलतन्तु जीवन से ही रस-ग्रहण करते है... साहित्य जीवन से भिन्न नहीं है, वरन् यह उसका ही मुखरित रूप है। वह जीवन के महासागर से उठी हुई उच्चतम तरंग है।''[१]

इस प्रकार एक और जहाँ कला स्वतन्त्र सृष्टि है, वहाँ दूसरी ओर, उसका जीवन से विच्छेद नहीं है। लोक के आचार की प्रतिष्ठा भी कलाकार का कर्तव्य है। पाश्चात्य देशों में कला के इस प्रकार के प्रयोजन को लेकर बड़ा वाद-विवाद हुआ है। कला नति और आचार का ध्यान रखकर चले, वह उपदेश-प्रधान हो, जीवन की उपयोगी बातों की सृष्टि और अभिव्यक्ति करे, यह विचार इस वाद-विवाद का एक पक्ष है। इसे नीतिवाद, आचारवाद या कला जीवन के लिए है` सिद्धान्त कहा जाता है।

कलावाद की व्याख्या - इस दृष्टिकोण को `कला कला के लिए` सिद्धान्त या कलावाद की संज्ञा से अभिहित किया गया है। इस दृष्टिकोण व सिद्धान्त की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि यह है कि कलाकार कलाकृति की रचना करते समय कोई निश्चित प्रसारवादी, नीतिवादी, आचारवादी या उपदेशात्मक दृष्टिकोण को लेकर कला-सृष्टि करने नहीं बैठता। कलाकार का मुख्य उद्देश्य कला की सृष्टी है। इस सृष्टि में निति या आचार की शिक्षा भी कलाकार दे, यह बंधन उस पर नहीं होना चाहिए। कालावादियों का यह भी कहना है कि कलाकार के सामने प्रयोजन या उद्देश्य की कोई सीमाएँ या बन्धन नहीं होने चाहिएँ, जिससे कि उसकी प्रतिभा का स्वच्छन्द प्रस्फुटन हो सके और साथ ही कलाकार की कला भी स्वतन्त्र सृष्टि के रूप में अपना पूर्ण विकास कर सके। तात्पर्य यह कि कला का प्रयोजन उसकी उपयोगिता में नहीं है और कलाकार की प्रतिभा की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति कला, राजनीतिक, सामाजिक या अन्य प्रकार के मानदण्डों पर नहीं कसी जानी चाहिए। कला का प्रयाजन उसकी सृष्टि-मात्र है और उस पर किसी प्रकार के बाह्य नियमनों का आरोप उसके साथ अन्याय है।

कलावाद के सम्बन्ध में आचार्यों के मत - `कलावादी` कलाकार प्रायः नीति की उपेक्षा करते हैं। सबसे अधिक मनोरंजक बात यह है कि अपनी कला वे स्वय ही समीक्षक है और उन्होंने अपने ऊपर लगाये जाने वाले आरोपों का भली प्रकार

खण्डन किया है। इस प्रकार के `कला कला के लिए` है - सिद्धान्त के प्रर्वत्तक, पोषक और समर्थन आचार्यों में आकर वाइल्ड तथा ए.सी. ब्रैडवे के नाम प्रमुख हैं। आस्कर वाइल्ड ने अपने सिद्धान्त की पुष्टि करते हुए लिखा है कि ``समालोचना में सबसे पहली बात यह है कि समालोचक की यह परख हो कि कला और आचार के क्षेत्र पृथक् पृथक् हैं।``[२] इसी प्रकार ए.सी. ब्रैडले भी इसी मत की पुष्टि करते हैं। उन्होंने काव्य या कला को स्वतन्त्र और निरपेक्ष दृष्टिकोण से परखा है और यह मत स्थिर किया है कि शुद्ध कला की दृष्टि से कला का मूल्यांकन कला के मापदण्ड से ही किया जाना चाहिये। यह मापदंड सौन्दर्य का हो सकता है। एक दूसरे आचार्य जे.ई. स्पिन्गर्न कला का सदाचार के साथ कोई सम्बन्ध नहीं मानते। उन्होंने किखा है कि ``शुद्ध काव्य के भीतर सदाचार-दुराचार ढँढ़ना ऐसा ही है जैसा कि समत्रिकोण त्रिभुज को सदाचारपूर्ण और समद्विबाहू त्रिभुज को दुराचारपूर्ण कहना`` -

```To say that poetry as poetry is moral of immoral is as meaningless to say that an equilateral triasngle is moral and an icosceles triangle is immoral.``

`कला कला के लिए` सिद्धान्त के समर्थक भारतीय आचार्यों में श्री इलाचन्द्र जोशी का नाम लिया जाता है। उन्होंने अपने `साहित्य-सर्जना` नामक ग्रंथ मे `कला और नीति` शीर्षक के अन्तर्गत अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये हैं -

``विश्व की इस अनन्त सृष्टि की तरह कला भी आनन्द का ही प्रकाश है। उसके भीतर नीति, तत्त्व अथवा शिक्षा का स्थान नहीं। उसके अलौकिक माया-चक्र से हमारे हृदय की तंत्री आनन्द की झकोर से बज उठती है, यही हमारे लिए परम लाभ है। उच्च अंग की कला के भीतर किसी तत्त्व की खोज करना सौन्दर्य देवी के मन्दिर को कलुषित करना है।``[३]

आचारवाद का स्वरूप - ऊपर `कलावाद` अथवा `कला कला के लिए है` के सिद्धान्त की व्याख्या की गई है। इस सम्बन्ध में जिन आचार्यों के मत उधृत किये गये हैं, उन्होंने कला के सम्बन्ध में प्रायः सौन्दर्य की चर्चा करते हुए, कला को आचारवाद या नीति की मर्यादा से स्वतन्त्र रखने के अपने दृष्टिकोण का प्रतिस्थापन और समर्थन किया है। दूसरी ओर कला में उपयोगिता का तत्त्व मानने वाले आचार्य न तो सौन्दर्य को ही आचार से पृथक् करने के पक्ष में है और कला को स्वच्छन्द, आचारणहीनता की सृष्टि मानने के पक्ष में है। पाश चात्य आचार्यो में रस्किन टायलस्टाय, आई. ए. रिचड्र्स के नाम इस दृष्टिकोण के समर्थक आचार्यों में लिये जा सकते है। टायस्टाय के मत से कला का उद्देश्य बुद्धि के क्षेत्र से भाव के क्षेत्र में उस तत्त्व को ले जाना है जो यह बतलाता है कि मनुष्यों का कल्याण उनके एक होकर रहने में तथा ईश्वर के उन साम्राज्य के स्थापित करने में है जो कि प्रेम पर आश्रित है और जिसको हम जीवन का चरम लक्ष्य मानते हैं -

``The destiny of art in our time is to transmit from the realm of reason to the realm of feeling the truth that well ebign for man cosists in their being united together, and to set up, in place of existing of force that kingdom of God that is of love, which we all recoize to be the aim of human life.``[४]

भारतीय आचार्यों में रवीन्द्रनाथ ठाकुर का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है जो सुन्दर और मंगल को एक-रूप स्वीकार करते हैं। उन्होंने अपने विचारों को इस प्रकार प्रकट किया है-
```

``हमारे पुरारगों में लक्ष्मी केवल सौन्दर्य और ऐश्वर्य की ही देवी नहीं है, वह मंगल की भी देवी है। सौन्दर्य-मुर्ति ही मंगल की पूर्ण मूर्ति है और मंगलमूर्ति ही सौंन्दर्य का पूर्ण स्वरूप है।''[५]

आचारवाद के सिद्धान्त का सार यह है कि कला का उद्देश्य जीवन से पृथक् नहीं, जीवन के लिए ही है। कला में समाविष्ट आचार का भाव `कान्तासमिततयोपदेशयुये` की भाँति जीवन को गति देता है और इस प्रकार कला का सृजन ही जीवन के लिए होता है।

क्रोचे का विचार है कि उपयोगिता ही सौन्दर्य का रूप धारण कर लेती है। जो पोशाक मनुष्य की परिस्थिति और आवश्यकताओं के अनुकूल होगी, वहीं सुन्दर कही जायगी - "A garment is only beautiful because it is quite suitable to a given person in a given condition."[६]

इस प्रकार क्रोचे कला के साथ उपयेगिता भी मानने के पक्ष में है।

सारांश :

कलावाद की इस समीक्षा से यह स्पष्ट है कि कोई भी कलाकृति निति या आचार से सर्वथा स्वतन्त्र नहीं हो सकती। विवाद केवल इस विषय में ही सकता है कि कला में नीति और आचार का समावेश किस रूप में किया जाना चाहिए। इसे स्वीकार करने में किसी की भी आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि कला में नीति का आरोप जान-बूझ कर इस रूप में नहीं होना चाहिए कि उससे कलाकृति का वास्तवकि सौन्दर्य ही नष्ट हो जाये। काव्य में आचार की भावना अन्तर्मिहित भावधारा की आश्रित होकर ही आ सकती है। सत्य ओर सौन्दर्य में अथवा सौन्दर्य और शिव में कोई विरोध नहीं है। सौन्दर्य (कलाकृति का गुण) बाह्यरूप में ही सीमित नहीं है, उसका आन्तरिक पक्ष भी है। सौन्दर्य का आनतरिक पक्ष ही शिव है। इस शिव की उपेक्षा कलाकार को नहीं करनी चाहिए। `कलावाद` की मुख्य विचारधारा यदि इतनी ही हो कि कला एक स्वतन्त्र सृष्टि है और कला के साथ न्याय का अर्थ है उसे स्थूल उपदेशात्मकता से बचाना-तो किसी को आक्षेप न हो। परन्तु जहा नीति या आचार की अवहेलना की जाती है, वहाँ कला शिवत्व की छोड़कर लोक के लिए अमंगलकारी हो जाती है। कला की सार्थकता इसी बात में है कि उसमें `स्वयं, शिवं और सुन्दरम्` का सामंजस्य हो। कला के इस उदात्त स्वरूप में लोकमंगल की भावना अपने-आप आ जाती है। यही कला का वास्तविक स्वरूप है।

संदर्भ सूची :

१) पाश्चात्य दर्शन का इतिहास - डॉ. बाबू गुलाबराय

२) भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र - डॉ. राम प्रकाश

३) साहित्य - सृजना - श्री. इलाचंद्र जोशी

४) भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र - डॉ. राम प्रकाश

५) गीतांजलि - रविंद्रनाथ ठाकुर

६) भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र - डॉ. राम प्रकाश